

प्रवचन— दादा भगवान जी

संसार में जो दुःख आते हैं, वे हमारे द्वारा धर्म की विराधना होने से आते हैं। धर्म की विराधना अर्थात् “ किसी भी जीव को किंचितमात्र दुःख देने का भाव हुआ हो। ”

जो हमारे मन व चित्त को विचलित करते हैं, वे सभी कुसंग है। जो मन व चित्त को स्थिर करे, वह सत्संग है।

ठीक है, ऐसा न बोलें ‘अच्छा है’, ऐसा बोलें तो अच्छा ही होता है।

यदि देह सुख चाहिए तो किसी भी जीव को मन—वचन—काया से दुःख न पहुँचाएँ।

जीव मात्र को सुख देना ‘धर्म’ है और दुःख देना ‘अधर्म’ है।

मन—वचन—काया से सत्य बोलें तो ‘वचनसिद्धि’ प्राप्त होती है।

गंभीर और चरित्रवान होना जगत के आधारबिंदू है, और ये ही भगवान के पास जाने के रास्ते हैं।

सभी में शुद्धात्मा देखें, यही ‘विश्वमैत्री भाव’ है।

जीव को ज्ञान क्यों नहीं प्राप्त होता? क्योंकि उसे अज्ञान बहुत प्रिय है।

किसी को भी दुःख पहुँचाए बिना जो कुछ किया जाता है, वह ‘प्रगति’ कहलाती है।

निर्दोष बनना हो तो सामने वाले से माफी माँगिए और भूल बढ़ानी हो तो सामने वाले से माफी मँगवाइए।

इस दुनिया में नया कुछ भी होने वाला नहीं है और जो होने वाला है उसमें कोई परिवर्तन हो ही नहीं सकता और वह हुए बिना रहेगा नहीं।

काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह, ईर्ष्या ये ही दुःख देने वाले हैं और ये ही आपके दुश्मन हैं, बाहर कोई दुश्मन नहीं है।

जो शिष्य बनना जानते हैं, वे ही गुरु—पद प्राप्त कर सकते हैं।

इस जगत में किसी की भी गलती निकालने जैसा नहीं है। गलती निकाली यानी बँध गए।

अपमान का असर कब तक होता है ? जब तक 'मान की भीख' है तब तक।

किसी भी कार्य को करते हुए भीतर सहज भी शंका न हो तो वह कार्य अवश्य होता ही है।

जगत तो एक पल में यश देगा और दूसरे पल में अपयश अतः हमें यश — अपयश से क्या लेना है?

यदि आप दूसरों के लिए जीते हैं। तो दूसरे आपके लिए जिएँगे ही, ऐसा नियम है और यदि आप अपने लिए जीते हैं तो कोई भी आपके लिए नहीं जिएगा ।

इस जगत में किसी को भी सुधारने की राह 'प्रेम' ही है।

मुझमें भूल ही नहीं है, ऐसा तो कभी भी नहीं बोला जा सकता।

अच्छी बात विपरीत बोलने से बिगड़ जाती है वैसे ही विपरीत बात अच्छा बोलने से सुधर जाती है।

एक भी मच्छर आपको स्पर्श नहीं कर सकता ऐसा न्यायपूर्ण जगत है यदि आप दखल न करें तो।

इस जगत में कोई भी ऐसा नहीं है जो हमें किंचितमात्र भी दुःख दे सके और यदि कोई दुःख देने वाला है तो वह हमारी ही 'भूल' है।

आयुष्य का काल बदला नहीं जा सकता लेकिन गति में परिवर्तन हो सकता है।

जब सामने वाले को निमित्त मानकर निर्दोष देखेंगे तब क्षमा देनी नहीं पड़ेगी, वहाँ सहज क्षमा होगी ही।

मनुष्य की शोभा कपड़ों से नहीं बल्कि वाणी, वर्तन और कर्म की सुगंध से होती है।

किसी के गुण देखेंगे तब भी नुकसान है, दोष देखेंगे तब भी नुकसान है। 'निर्दोष' देखेंगे तभी मुक्त हो पाएँगे।

गैर समझ को निकालने की जरूरत नहीं है बल्कि 'समझ' को समझने की जरूरत है।

गंभीरता अर्थात् हमारे हिस्से में आए हुए कार्य को दिल लगाकर करना और 'नैतिकता' अर्थात् हमारे हक का, सहज रूप से मिला हुआ उपयोग करना।

यदि सनातन सुख प्राप्त करना चाहते हैं तो निश्चय करिए कि "मेरे मन—वचन—काया से किसी को दुःख न हो।

भगवान न्याय स्वरूप भी नहीं हैं और अन्याय स्वरूप भी नहीं है। 'किसी को दुःख न हो' यही भगवान की भाषा है।

इस जगत में 'देना—लेना', यह एक व्यवहार है अतः हमें ऐसा देना चाहिए जो वापिस आए तो हमें अच्छा लगे।

बाहर के काम कब सुधरते हैं? जब भीतर शांति होती है तब।

इस दुनिया में धोखा कौन खाता है? 'लालची' ! जो लालची न हो, उसे भगवान भी धोखा नहीं दे सकते ।

जहां आसक्ति होती है वहाँ आक्षेप हुए बिना रहते ही नहीं हैं। यह आसक्ति का स्वभाव ही है। इस जगत में लड़ाई —झगड़े कहाँ होते हैं?जहां आसक्ति होती है।

जो मुक्त हुए हैं, उनकी समझ से चलेंगे तो मुक्त हो जाएंगे और बँधे हुए की समझ से चलेंगे तो बँध जाएंगे ।

कोई भी इच्छा न हो और किसी का भी अवलम्बन न लेना पड़े, यह 'सुख' की व्याख्या है।

चिंता समझ का नाश करने वाली वस्तु है।

जिसके पास समता रूपी शस्त्र है,उसे डरने की क्या जरूरत है?

इस काल में सबसे अच्छा गुण है,कम बोलना।

'याचकता' छूटे तो आप स्वयं ही परमात्मा है।

वृद्धावस्था में आदर्श व्यवहार हो तो किस काम का? आदर्श व्यवहार तो जीवन की शुरुआत से होना चाहिए।

संसार में अड़चन न आए तो प्रगति ही न हो। जैसे सप्ताह में एक रविवार आता है वैसे ही संसार में भी कभी न कभी अड़चन तो आएगी ही न ।

लक्ष्मी तो पुण्याई से मिलती है, मेहनत से मिलती होती तो मज़दूरों के पास क्यों नहीं है। बुद्धि से मिलती तो पण्डितों के पास क्यों नहीं है।

निंदा तो अधोगति में जाने की निशानी है।